वह दिल्ली के हरिश्चन्द्र पण्डित जी का एक पड़ोसी कायस्थ है। स्वामी जी ने उससे तुरन्त कहा-असत्य मत बोलो। तुम स्वयं हरिश्चन्द्र ही हो उसके पड़ोसी नहीं। हरिश्चन्द्र आया तो कुछ वितण्डावाद करने को था मगर स्वामी जी की प्रतिभा को देखकर वहाँ से लज्जित होकर चलता बना। ग्वालियर के एक पण्डित गोपाल आचार्य को एक सेठ गुरू सहायमल ने अच्छा वैयाकरण मानकर सौ रूपए भेंट किए तो गुरू विरजानन्द ने सेठ से कहा कि तुम चाहे पण्डित जी को जितना चाहो धन भेंट करो मगर यदि इसे एक अच्छा वैयाकरण मानकर भेंट कर रहे हो तो यह बात इसे सिद्ध करने के लिए कहें। आचार्य तो बगलें झांकने लगा मगर काशी से आए पण्डित विश्वेश्वर शास्त्री ने आचार्य जी को शास्त्रार्थ के लिए तैयार कर लिया। रंगाचार्य की मध्यस्थता में शास्त्रार्थ हुआ। आचार्य गोपाल का पक्ष था कि भाव एक प्रकार का है और इसकी द्वैधता महाभाष्य में नहीं है। परन्तु दण्डी जी ने अष्टाध्यायी का सूत्र प्रस्तुत करके द्वैधता सिद्ध कर दी। इस पर रंगाचार्य ने स्वामी जी की बहुत प्रशंसा की। पण्डित गंगाराम तीर्थ-यात्रा करते हुए मथुरा पहुँचे तथा दण्डी जी से शास्त्र-चर्चा हुई तथा उन्होंने अनार्ष-ग्रन्थों का प्रबल खण्डन किया जिससे शास्त्री जी अत्यधिक प्रभावित हुए तथा भविष्य में पाणिनि का प्रचार करने का संकल्प लिया। एक बार स्वामी आदित्यगिरि अपने एक सौ से अधिक शिष्यों के साथ मथुरा पधारे तथा भगवत्गीता की कथा करने लगे। भारी संख्या में श्रद्धालु उन्हें सुनने के लिए आने लगे। दण्डी जी ने उन स्वामी जी के पास अपने दो शिष्यों को कौमुदी के दोषों की चर्चा करने के लिए भेजा। कथा की समाप्ति पर उन दोनों ने स्वामीजी से कौमुदी की अशुद्धता पर वार्तालाप किया तो स्वामी जी स्तब्ध रह गए। अन्ततः वे स्वयं दण्डी जी से आकर मिले तथा उनसे चर्चा